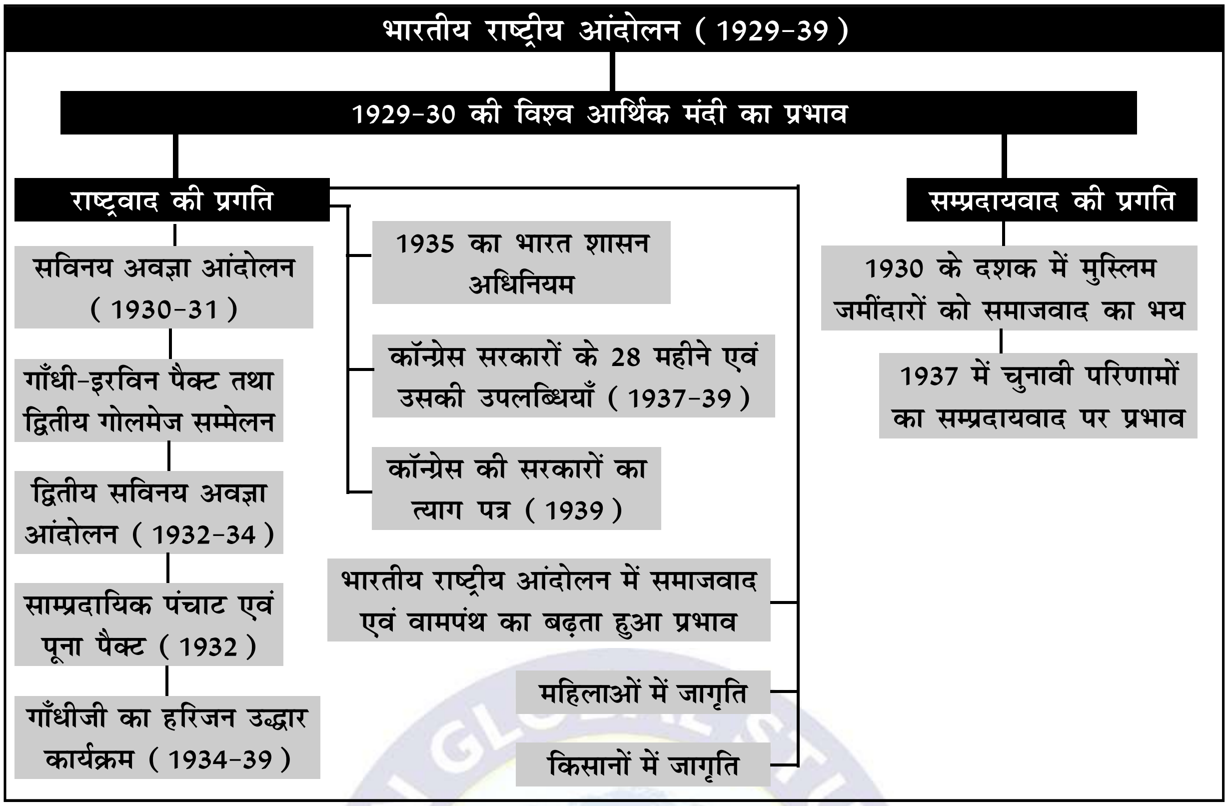

सविनय अवज्ञा आंदोलन

- 1930 तक भारत में आंदोलन की पृष्ठभूमि बनने लगी थी। इसमें निम्नलिखित कारकों का योगदान रहा था-

1. 1929-30 की विश्व आर्थिक मंदी ने भारत के विभिन्न सामाजिक वर्गों को प्रभावित किया। इसने धनी एवं निर्धन किसान, पूँजीपति एवं श्रमिक, सभी पर पृथक्-पृथक् प्रभाव छोड़ा तथा विभिन्न आंदोलनों में उनकी भागीदारी को सुनिश्चित किया।

- धनी किसान इस मंदी से इसलिए प्रभावित हुए क्योंकि वे बाजार के लिए उत्पादन करते थे, वहीं निर्धन किसानों के लिए महाजनी ऋण की कमी पड़ गई। उसी प्रकार, पूँजीपति साम्राज्यवादी वरीयता के प्रावधान तथा रूपये को मजबूत किये जाने से क्षुब्ध थे। दूसरी तरफ, मजदूरों को छँटनी का भय सता रहा था। अत: इस दौरान मजदूरों की भागीदारी विभिन्न आंदोलनों में अपेक्षाकृत कम हुई थी। इसलिए 1930 के दशक में वर्गीय आंदोलन ने राजनीतिक दिशा को प्रभावित किया तथा इस काल में आंदोलनों में तेजी आयी।

2. भारतीय युवा वर्ग में असंतोष बढ़ रहा था। उनमें से अनेक युवा क्रांतिकारी राष्ट्रवाद की ओर बढ़ रहे थे। गाँधीजी एक बार फिर उन्हें राष्ट्रीय आंदोलन की मुख्य धारा में लाना चाहते थे।
3. गाँधीजी रचनात्मक ग्रामीण कार्यकम के माध्यम से कॉन्ग्रेस का जनाधार काफी विकसित कर चुके थे और अब वे नये आंदोलन के लिए तैयार थे।
4. 1929 के लाहौर अधिवेशन में कांग्रेस ने पूर्ण स्वराज्य का प्रस्ताव पारित किया तथा अखिल भारतीय कांग्रेस समिति को एक आंदोलन छेड़ने के लिए भी अधिकृत किया। फिर जनवरी, 1930 में गाँधी ने इर्विन के समक्ष ग्यारह सूत्री मांगें रखीं, जिनका इर्विन द्वारा कोई जवाब नहीं देने पर गाँधी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन छेड़ने का निर्णय लिया।

- गाँधीजी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन की शुरूआत 'नमक कर कानून' के उल्लंघन के साथ करने का निर्णय लिया। फिर 12 मार्च, 1930 को गाँधीजी ने साबरमती आश्रम से 78 अनुयायियों के साथ यात्रा शुरू की जिसे 'दाण्डी मार्च' कहा जाता है। उन्होंने 6 अप्रैल, 1930 ई. को दांडी में नमक कानून का उल्लघंन किया।
- सविनय अवज्ञा आंदोलन में एक व्यापक कार्यक्रम अपनाया गया। उदाहरण के लिए, तटीय क्षेत्र में नमक कानून का उल्लंघन, रैयतवाड़ी क्षेत्र में कर रोको आंदोलन, जमींदारी क्षेत्र में चौकीदारी कर रोको आंदोलन, नशीले पदार्थों की बिक्री करने वाले दुकानों के समक्ष धरना आदि।
- गाँधी की गिरफ्तारी के शीघ्र बाद यह आंदोलन भारत के विभिन्न क्षेत्रों में फैल गया। दक्षिण भारत में चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ने नमक कानून का उल्लंघन किया।

उत्तर-पश्चिमी भारत में खान अब्दुल गफ्फार खाँ के नेतृत्व में पठानों ने 'खुदाई खिदमतगार' नामक संगठन बनाकर आंदोलन में भाग लिया। इसी तरह, आंदोलन का प्रसार पूर्वी एवं उत्तर-पूर्वी भागों में भी हुआ। फिर जनजातीय क्षेत्रों में आदिवासियों ने बड़े पैमाने पर वन कानूनों का उल्लंघन किया।

- **नमक को एक महत्त्वपूर्ण मुद्दे के रूप में क्यों चुना गया? :-** गाँधी ने सोच-समझकर नमक के मुद्दे को उठाया। नमक के माध्यम से उन्होंने भारत के करोड़ों चूल्हों को राष्ट्रीय आंदोलन से जोड़ दिया। सामान्य लोगों के लिए नमक का मसला एक आर्थिक मसला था, जबकि भारतीय बुद्धिजीवियों के लिए यह राष्ट्रीय स्वाभिमान का प्रश्न था। इस तरह नमक के मुद्दे को उठाकर गाँधी ने भारतीय बुद्धिजीवी एवं जनसामान्य के बीच की खाई पाट दी।
- **सामाजिक भागीदारी :-** सविनय अवज्ञा आंदोलन में व्यापक जनभागीदारी हुई थी। इसमें असहयोग आंदोलन की तुलना में किसानों की भागीदारी अधिक रही। उसी प्रकार, इसमें महिलाओं की भी भागीदारी रही। सबसे बढ़कर, असहयोग आंदोलन के विपरीत इसमें पूँजीपति वर्ग की भागीदारी रही। किन्तु इसमें छात्रों और बुद्धिजीवियों की भागीदारी आंशिक दिखती है। दूसरी तरफ, असहयोग आंदोलन के विपरीत इसमें मजदूरों की भी सीमित भागीदारी रही। इसके अलावा, इस आंदोलन में हिंदुओं और मुस्लिमों में वैसी एकता देखने को नहीं मिली जैसी असहयोग आंदोलन के समय दिखाई दी थी।
- असहयोग आंदोलन एवं सविनय अवज्ञा आंदोलन के मध्य एक मूलभूत अंतर यह था कि असहयोग आंदोलन ने 'स्वराज' को अपना लक्ष्य बनाया था, जबकि सविनय अवज्ञा आंदोलन ने 'पूर्ण स्वराज' को अपना लक्ष्य घोषित किया था।
- भारतीय पूंजीपति वर्ग द्वारा कॉन्ग्रेस पर आंदोलन समाप्त करने के लिए दबाव बनाया जा रहा था क्योंकि निरंतर श्रमिक हड़ताल, आंदोलन एवं राजनीतिक उथल-पुथल से इस वर्ग को घाटा उठाना पड़ रहा था। दूसरी तरफ, मध्य प्रांत, महाराष्ट्र और कर्नाटक क्षेत्र में आदिवासी विद्रोह अनियंत्रित और खतरनाक रूप धारण कर रहे थे।
- 5 मार्च, 1931 को गाँधी एवं वायसराय इर्विन के मध्य एक समझौता हुआ जो '**गाँधी-इर्विन समझौता**' के नाम से जाना जाता है। इस समझौते के निम्नलिखित पहलू थे-
  - गाँधी जी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन को वापस ले लिया।
  - उन लोगों की रिहाई की जाए, जिन्होंने हिंसक घटनाओं में भाग नहीं लिया था।
  - उन लोगों को संपत्ति वापस दे दी जाए, जिनकी संपत्ति अधिग्रहण के पश्चात् किसी तीसरी पार्टी को नहीं बेची गयी हो।
  - तटीय क्षेत्र में निवास करने वाले लोगों को अपनी जरूरत को पूरा करने के लिए नमक बनाने की भी अनुमति दी गई।
  - लोगों को शांतिपूर्ण ढंग से नशीले पदार्थों की दुकानों पर धरना देने का भी अधिकार दिया गया।

द्वितीय गोलमेज सम्मेलन (1931) :-

- 1930 में होने वाले प्रथम गोलमेज सम्मेलन में कांग्रेस ने हिस्सा नहीं लिया था, किंतु 1931 में गाँधी-इर्विन पैक्ट के पश्चात् कांग्रेस के एक मात्र प्रतिनिधि के रूप में द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में हिस्सा लेने गाँधी जी लंदन गये। इस सम्मेलन में विभिन्न भारतीय राजनीतिक दलों और गुटों को प्रतिनिधित्व मिला हुआ था। गाँधीजी ने उन सबके साथ मिलकर भारत के संवैधानिक मुद्दे को आगे बढ़ाना चाहा, किंतु उन्हें निराशा तब हुई जब उन्होंने यह देखा कि मुस्लिम वर्ग के मॉडल पर दलित वर्ग, एंग्लो इंडियन, भारतीय ईसाई, यूरोपीय समूह सभी पृथक निर्वाचन की माँग करने लगे थे। गाँधी ने उन माँगों को ठुकरा दिया। फिर गाँधी को गहन निराशा तब हुई जब उन्होंने यह पाया कि रैम्जे मैकडोनाल्ड की सरकार कांग्रेस के साथ इस प्रकार का व्यवहार कर रही थी, मानो कांग्रेस भी अन्य भारतीय हित समूहों की तरह केवल एक हित समूह है। अत: गाँधी निराश होकर लंदन से वापस आ गये।

द्वितीय सविनय अवज्ञा आंदोलन :-

- इधर इर्विन की जगह एक अनुदारवादी वायसराय लॉर्ड विलिंग्डन का आगमन हो चुका था, जिसने कॉन्ग्रेस के प्रति दमनात्मक रुख अपनाया। उसने जवाहर लाल नेहरू तथा खान अब्दुल गफ्फार खान को गिरफ्तार कर लिया था। गाँधी ने आने के बाद वायसराय से साक्षात्कार के लिए समय की माँग की, किंतु वायसराय ने उन्हें साक्षात्कार देने से इंकार कर दिया। अब गाँधी के पास दूसरा कोई विकल्प नहीं था, अत: उन्होंने एक बार फिर 4 जनवरी, 1932 को सविनय अवज्ञा आंदोलन छेड़ दिया। किंतु सरकार पहले से ही तैयार थी, कई प्रकार के दमनात्मक कानून बनाये जा चुके थे, कांग्रेस एक गैर कानूनी संस्था घोषित कर दी गई तथा सरकार का उग्र

दमन चक्र आरंभ हुआ, इस प्रकार आंदोलन की कमर टूटने लगी।

सांप्रदायिक पंचाट तथा पूना पैक्ट :-

- वस्तुत: द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में विभिन्न संप्रदायों एवं दलित वर्गों के लिये पृथक निर्वाचन मंडल के विषय पर कोई सहमति नहीं बन पायी थी। अत: इस समस्या के समाधान के लिये ब्रिटिश प्रधानमंत्री रैम्जे मैकडोनाल्ड ने 16 अगस्त, 1932 ई. को एक घोषणा की, जिसे 'सांप्रदायिक पंचाट' कहा जाता है।
- मुसलमान, सिख तथा यूरोपियों को पहले से ही पृथक् निर्वाचन का अधिकार था, अब इस साप्रदायिक पंचाट के तहत दलितों को भी हिंदुओं से अलग एक अल्पसंख्यक वर्ग मानकर पृथक् निर्वाचन का अधिकार दे दिया गया। ब्रिटिश सरकार के इस निर्णय को गांधीजी ने एक राष्ट्र के रूप में भारत को तोड़ने के लिये ब्रिटिशों का एक षड्यंत्र माना। अत: गाँधीजी ने सांप्रदायिक पंचाट का विरोध करने के लिये यरवदा जेल में 20 सितंबर, 1932 ई. से आमरण अनशन प्रारंभ कर दिया।
- मदन मोहन मालवीय की मध्यस्थता में गाँधी एवं डॉ. अंबेडकर के बीच एक समझौता हुआ, जो 'पूना समझौता' के नाम से जाना जाता है। पूना समझौता के अनुसार, अंबेडकर ने पृथक् निर्वाचन पद्धति के स्थान पर संयुक्त निर्वाचन पद्धति को स्वीकार कर लिया। इसके बदले केंद्रीय विधान परिषद् में दलित वर्ग के लिये सीटों की संख्या में लगभग 18% की वृद्धि की गई तथा प्रांतीय विधान मंडलों में सीटों की संख्या को 71 से बढ़ाकर 148 कर दिया गया।

प्रश्न :- अपसारी उपागमों एवं रणनीतियों के होने के बावजूद महात्मा गांधी और डॉ. भीमराव अंबेडकर का दलितों की बेहतरी का एक समान लक्ष्य था। स्पष्ट कीजिये। (UPSC-2015)

*(**प्रश्न विश्लेषण:** यह प्रश्न अपने स्वरूप में Hypothetical है। Key Words हैं- 'अपसारी', 'उपागम', 'रणनीतियों', 'महात्मा गांधी', 'भीमराव अंबेडकर', 'दलितों की बेहतरी', 'लक्ष्य', 'स्पष्ट'।)*

उत्तर: जब हमारे समक्ष दलित वर्ग के उत्थान का मुद्दा आता है तो हमारे मस्तिष्क में गांधी एवं अंबेडकर, दोनों की छवि उभरती है। दोनों आज़ादी को दलित वर्ग की दहलीज तक पहुँचाना चाहते थे। यद्यपि उनके सोचने के अंदाज तथा काम करने की पद्धति में अंतर था। इसे निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से समझा जा सकता है-

- अंबेडकर दलित वर्ग के उत्थान के लिये आर्थिक पुनर्वितरण को आवश्यक मानते थे। उनका विचार था कि जब तक दलित लोग आर्थिक रूप से स्वावलंबी नहीं होंगे, तब तक वे सामाजिक शोषण से मुक्त नहीं हो सकेंगे। वहीं गांधी जी का मानना था कि अस्पृश्यता की समस्या सामाजिक मुद्दा है, इसलिये सामाजिक मोर्चे पर ही उसका हल ढूंढ़ा जाना चाहिये।
- उसी तरह अंबेडकर का मानना था कि दलित वर्ग का उत्थान तभी होगा, जब दलित वर्ग में अपने अधिकारों के प्रति सजगता होगी, परंतु गांधीजी, सवर्णों में करुणा का भाव जगाकर दलितों की दशा सुधारना चाहते थे। इसलिये दोनों अपनी सोच तथा अनुभव के आधार पर काम करते रहे।
- एक तरफ अंबेडकर ने जबरन मंदिर प्रवेश कार्यक्रम में दलित वर्ग का नेतृत्व किया, वहीं गांधीजी ने अछूतोद्धार कार्यक्रम पर बल दिया तथा सवर्णों को अपनी मानसिकता बदलने के लिये प्रोत्साहित किया।
- आरक्षण के मुद्दे पर भी गांधीजी तथा अंबेडकर के दृष्टिकोण में मतभेद था। गांधीजी आरक्षण को स्थायी विषमता उत्पन्न करने वाला कारक मानते थे, वहीं अंबेडकर दलित वर्ग के उत्थान के लिये आरक्षण को आवश्यक मानते थे। अंबेडकर के इस दृष्टिकोण को अंतत: संविधान में जगह मिली।
- अंत में, अंबेडकर एक बुद्धिजीवी थे तथा उन्होंने दलित उत्थान के मुद्दे पर संसद, संविधान सभा एवं अन्य प्रकार के राजनीतिक मंचों पर अकादमिक बहस छेड़ी, वहीं गांधीजी एक सामाजिक कार्यकर्त्ता थे, अत: वे गाँव-गाँव में घूमकर तथा दलितों के बीच जाकर उनके उत्थान के लिये कार्य करते रहे।

उपर्युक्त तथ्यों के प्रकाश में हम ऐसा कह सकते हैं कि भारत में जो दलित उत्थान कार्यक्रम है, वह गांधीजी तथा अंबेडकर, दोनों की विरासत से संबद्ध है।

गाँधीजी का हरिजन उद्धार कार्यक्रम :-

- पूना समझौते के बाद गाँधी को एक नया मुद्दा मिल गया, वह था हरिजन उद्धार कार्यक्रम। फिर गाँधी ने हरिजन यात्रा शुरू की तथा रचनात्मक ग्रामीण कार्यक्रम में लग गए। हरिजन यात्रा के दौरान उन्होंने छुआ-छूत उन्मूलन का व्यापक प्रचार-प्रसार किया। इस समय गांधीजी ने स्वराज से अधिक अस्पृश्यता को महत्त्व दिया। उन्होंने 'अछूतों' को 'हरिजन' (ईश्वर की संतान) की संज्ञा देकर उन्हें मंदिरों, सार्वजनिक तालाबों, सड़कों एवं कुँओं

पर समान अधिकार दिलाने के लिये सत्याग्रह प्रारंभ कर दिया। उन्होंने 'हरिजन' नामक पत्र का संपादन आरंभ किया तथा 'हरिजन सेवक संघ' की स्थापना की। अब उनका ध्यान सविनय अवज्ञा आंदोलन से हट गया। अतः मई, 1933 ई. में उन्होंने सविनय अवज्ञा आंदोलन को अस्थायी रूप से और अप्रैल, 1934 में स्थायी रूप से वापस ले लिया।

प्रश्न :- "ब्रिटिश के विरुद्ध गांधीवाद सबसे खतरनाक हथियार सिद्ध हुआ।" टिप्पणी कीजिये।

*(**प्रश्न विश्लेषण:** यह प्रश्न अपने स्वरूप में Hypothetical है। इसमें निम्नलिखित Key Words हैं- 'विरुद्ध', 'गांधीवाद', 'खतरनाक हथियार', 'टिप्पणी'।)*

उत्तर: पश्चिम साम्राज्यवाद की संपूर्ण संस्कृति हिंसा पर आधारित थी। प्रशासन एवं आंतरिक सुरक्षा दंड शक्ति पर आधारित थी। उत्पादन प्रणाली प्रतिस्पर्द्धा पर आधारित थी और पूंजीवादी बाज़ार के विस्तार में भी युद्ध एवं संघर्ष का सहारा लिया जाता था। इस क्रम में साम्राज्यवादी शक्तियों के द्वारा अत्याधुनिक हथियारों के समक्ष गांधीवाद सबसे खतरनाक हथियार सिद्ध हुआ, क्योंकि साम्राज्यवादी शक्ति के पास उसकी कोई काट नहीं थी। इसे निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से समझा जा सकता है-

- गांधीजी के अहिंसा एवं सत्याग्रह के विचार ने सभी वर्गों, जैसे- किसान, ज़मींदार, व्यापारी, बच्चों एवं महिलाओं आदि को आकर्षित किया और राष्ट्रीय आंदोलन को मज़बूत किया। इस प्रकार, गांधीजी ने इसके माध्यम से एक वैकल्पिक राजनीति की शुरुआत की। गांधीजी की यह पद्धति ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध सबसे खतरनाक हथियार सिद्ध हुई।
- इन्होंने व्यक्तिवाद से बढ़कर वर्ग समन्वय पर बल दिया, ताकि जनशक्ति को बढ़ाया जा सके।
- गांधीजी की स्वराज की अवधारणा भी विलक्षण थी। उन्होंने इसके माध्यम से नैतिक स्वतंत्रता पर बल दिया। उन्होंने 1909 में लिखित 'हिन्द स्वराज' नामक पुस्तक में 'स्वराज' शब्द को स्पष्ट करने का प्रयास किया।
- गांधीजी ने पश्चिम की उपभोक्तावादी संस्कृति की खुलकर आलोचना की और पश्चिम के विपरीत ग्राम स्वराज पर बल दिया तथा विकेंद्रीकृत प्रशासन का मॉडल प्रस्तुत किया।
- इन्होंने रचनात्मक ग्रामीण कार्यक्रम के माध्यम से लाखों गाँवों को कॉन्ग्रेस की राजनीति से जोड़ा।

सबसे बढ़कर गांधीवाद ने दुनिया के शोषित एवं वंचित लोगों को साम्राज्यवादी शक्ति के विरुद्ध लड़ने के लिये अहिंसा एवं सत्याग्रह के रूप में एक कारगर हथियार दिया, उदाहरणस्वरूप- USA के अश्वेत नेता मर्टिन लूथर किंग, दक्षिण अफ्रीका के नेता नेल्सन मंडेला आदि ने गांधीवादी तरीके को अपनाया।

इस प्रकार गांधीवादी विचारधारा, ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ सबसे खतरनाक हथियार सिद्ध हुई।

भारत शासन अधिनियम, 1935

- गोलमेज सम्मेलन के पश्चात् सरकार द्वारा 1935 ई. का एक्ट लाया गया। कुछ प्रारंभिक आलोचनाओं के बावजूद कांग्रेस ने इसे स्वीकार कर लिया।

प्रमुख प्रावधान :-

- ब्रिटिश भारत और देशी रियासतों को मिलाकर एक संघ का निर्माण किया जाना था, परंतु उसके लिये शर्त यह रखी गई कि कम-से-कम आधे राज्यों की स्वीकृति हो। चूँकि, यह स्वीकृति नहीं मिली, इसलिये व्यवहार में यह संघ अस्तित्व में नहीं आया।
- प्रांतों में द्वैध शासन को समाप्त कर प्रांतीय स्वायत्तता लागू की गई अर्थात् प्रांतों में उत्तरदायी सरकार की स्थापना की जानी थी। परंतु इस अधिनियम के अनुच्छेद-93 के अधीन गवर्नर को अत्यधिक विवेकाधीन शक्तियाँ दी गई थीं।
- मताधिकार का विस्तार हुआ। धनी एवं मझोले किसानों को मताधिकार मिला। यहाँ ब्रिटिश सरकार का उद्देश्य किसानों को अपनी ओर खींचकर कांग्रेस का जनाधार कमजोर करना था।
- इस अधिनियम के आधार पर बर्मा को भारत से पृथक् कर दिया गया।
- एक संघीय न्यायालय तथा रिजर्व बैंक की स्थापना का प्रावधान किया गया।

कॉन्ग्रेस सरकारों के 28 महीने एवं उसकी उपलब्धियाँ

- 1935 का भारत शासन अधिनियम कई बातों में कांग्रेस के लिए निराशाजनक था। उदाहरण के लिए, इस अधिनियम में डोमिनियन स्टेटस तथा वयस्क मताधिकार का कोई प्रावधान नहीं था। संघीय व्यवस्था भी कांग्रेस की प्रगति को रोकने की एक साजिश थी। इसलिए आरंभ में कांग्रेस ने इसकी आलोचना की, किंतु फिर भी इसने चुनाव लड़ने का निर्णय लिया।

- 1937 के चुनाव में कांग्रेस को व्यापक सफलता मिली। कुल 11 प्रांतों में से 5 प्रांतों में कांग्रेस को स्पष्ट बहुमत मिला तथा कांग्रेस 7 प्रांतों में सरकार बनाने की स्थिति में थी। ये प्रांत थे-बिहार, मध्य प्रांत, संयुक्त प्रांत, उत्तर-पश्चिम सीमा प्रांत, मद्रास, बॉम्बे तथा उड़ीसा। आगे कांग्रेसी प्रांतों की संख्या बढ़कर 8 हो गई। इन प्रांतों में कांग्रेसी मंत्रिमंडल ने अपना पदभार सभाला। किंतु तभी कांग्रेस के अंतर्गत वामपंथी तथा दक्षिणपंथी गुट के बीच सरकार बनाने के मुद्दे पर विवाद आरंभ हो गया। कांग्रेस के अंतर्गत वामपंथी गुट का यह कहना था कि कांग्रेस को चुनाव के माध्यम से अपनी शक्ति का प्रदर्शन करना चाहिए, किंतु उसे सरकार में शामिल नहीं होना चाहिए क्योंकि गवर्नर के हस्तक्षेप के कारण सरकार पंगु हो जायेगी और फिर भारतीय जनता के बीच सरकार की बदनामी होगी, किंतु दक्षिणपंथी गुट चुनाव लड़ने के साथ सरकार में शामिल होने के लिए भी तत्पर था। अंत में, गाँधी जी की मध्यस्थता एवं वायसराय के आश्वासन पर कि गवर्नर अनावश्यक हस्तक्षेप नहीं करेगा, कांग्रेस के द्वारा प्रांतीय सरकारें स्थापित की गईं।
- बंगाल में कृषक प्रजा पार्टी के फजलुल हक ने पहले कांग्रेस को गठबंधन सरकार बनाने का प्रस्ताव दिया, परंतु कांग्रेस के इंकार करने पर मुस्लिम लीग के साथ मिलकर सरकार बना ली।
- कांग्रेस ने अपने शासन के 28 माह में अपने घोषणापत्र में किए गए वायदे को निभाने का प्रयत्न किया। कांग्रेस अध्यक्ष सुभाष चंद्र बोस ने 1938 में राष्ट्रीय योजना समिति नियुक्त की थी। इसके माध्यम से कांग्रेस की सरकारों ने योजना के विकास में हाथ बंटाने के प्रयास किए।
- जेल से राजनीतिक कैदियों की रिहाई, प्रांतों में किसानों की सुरक्षा के लिए रैय्यतवाड़ी कानून बनाना, प्रेस की आजादी के संरक्षण को लागू किया गया। शिक्षा के विकास के लिए वर्धा बेसिक शिक्षा योजना लायी गई जिसे मुस्लिम लीग एवं हिंदू महासभा ने अस्वीकार कर दिया।

कांग्रेस की सरकारों का त्यागपत्र

- सितम्बर, 1939 में द्वितीय विश्व युद्ध आरंभ होने के पश्चात् ब्रिटिश सरकार ने भारतीय दलों के साथ विचार-विमर्श किये बिना भारत को एक 'युद्धरत राष्ट्र' घोषित कर दिया। अत: कांग्रेस द्वारा इसका व्यापक विरोध आरंभ हुआ। गाँधी ने यह स्पष्ट कर दिया कि प्रथम विश्व युद्ध की तरह इस बार भारतीय जनता ब्रिटिश सरकार को बिना शर्त समर्थन नहीं देगी। गाँधी के नेतृत्व में कांग्रेस का यह कहना था कि सरकार को दो माँगें अविलंब पूरी करनी चाहिए। प्रथम, केंद्र में उत्तरदायी सरकार जैसा कोई प्रावधान हो। दूसरे, युद्ध के शीघ्र बाद भारतीयों के द्वारा निर्मित एक संविधान सभा का प्रावधान हो।
- चूँकि सरकार ने इस पर कोई स्पष्ट आश्वासन नहीं दिया। अत: नवम्बर, 1939 तक कांग्रेस की प्रांतीय सरकारों ने त्यागपत्र दे दिया। फिर कांग्रेस तथा सरकार के बीच विवाद आरंभ हो गया।
- जिस दिन कांग्रेसी सरकार ने त्यागपत्र दिया था, उस दिन को मुस्लिम लीग ने 'मुक्ति दिवस' के रूप में मनाया। मुस्लिम लीग के साथ अम्बेडकर और उनकी पार्टी ने भी मुक्ति दिवस मनाने में सहयोग दिया।

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में समाजवाद एवं वामपंथ का बढ़ता हुआ प्रभाव

- 1920 तथा 1930 के दशक में भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन पर एक शक्तिशाली वामपंथी प्रभाव महसूस किया गया। इस प्रभाव से राष्ट्रीय आन्दोलन के चरित्र में ही परिवर्तन हो गया। अब तक कांग्रेस का मुख्य लक्ष्य जहाँ राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करना था, वहीं अब सामाजिक तथा आर्थिक स्वतंत्रता की माँग भी की जाने लगी।

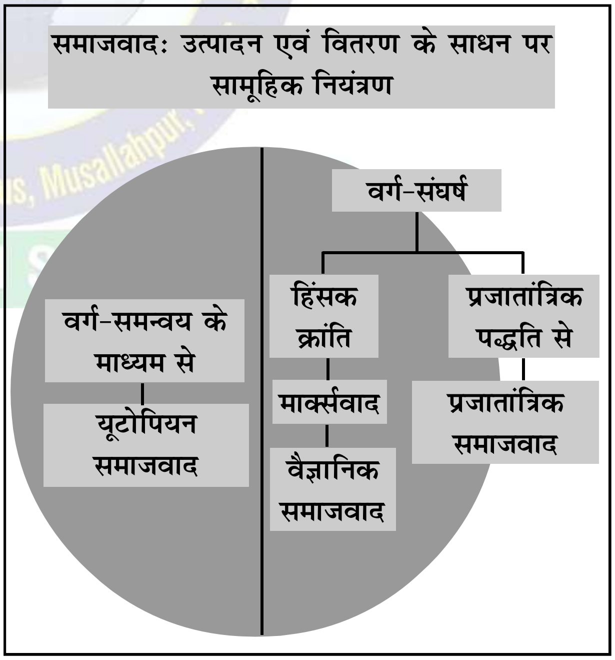

- **निम्नलिखित कारणों से समाजवाद को प्रेरणा मिली–**

1. भारत में वामपंथी विचार के उद्भव एवं प्रसार के पीछे मुख्य प्रेरक शक्ति 1917 की रूसी क्रान्ति को माना जाता है। 7 नवम्बर, 1917 को लेनिन के नेतृत्व में बोल्शेविक

पार्टी ने जार के निरंकुश शासक को उखाड़ फेंका तथा रूस में विश्व के पहले समाजवादी राज्य की स्थापना की घोषणा की। रूस द्वारा शासन व्यवस्था में सर्वहारा को महत्त्वपूर्ण स्थान देने से उपनिवेशों की शोषित जनता में यह विचारधारा काफी लोकप्रिय हुई।

2. असहयोग आन्दोलन को अपेक्षित सफलता नहीं मिलने से निराश युवा वर्ग को मार्क्सवाद एक वैकल्पिक एवं तीव्र स्वतंत्रतागामी मार्ग लगा। इसके अतिरिक्त, युवाओं का एक वर्ग गाँधीवादी समाधान से संतुष्ट नहीं था।

3. 1929-30 की विश्व आर्थिक मंदी ने भी पूँजीवादी अर्थव्यवस्था की कमजोरी को उद्घाटित कर दिया। इस विश्वव्यापी मंदी से जिस प्रकार सोवियत रूस ने स्वयं को बचाए रखा, इससे भी साम्यवादी विचारधारा को लोकप्रियता मिली।

भारतीय राजनीति में समाजवादी एवं वामपंथी आंदोलन :

- **कम्युनिस्ट आंदोलन :** सर्वप्रथम एम. एन. राय ने 1920 ई. में ताशकंद में 'भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी' की स्थापना की थी, किन्तु भारत में औपचारिक रूप से कम्युनिस्ट आंदोलन की शुरूआत 1925 में कानपुर से हुई जब एम. सिंगारवेलु की अध्यक्षता में कम्युनिस्ट पार्टी की अखिल भारतीय बैठक हुई। इसमें श्रीपद अमृत डांगे, नेली सेनगुप्त, मुजफ्फर अहमद, शौकत उस्मानी आदि शामिल हुए।
- कम्युनिस्ट पार्टी ने कांग्रेस के साथ मिलकर काम करने का निर्णय लिया। उसका उद्देश्य था कांग्रेस की नीति को वामपंथ की दिशा में मोड़ना। कम्युनिस्टों के द्वारा श्रमिक एवं किसान पार्टी का गठन किया गया। इस प्रकार कम्युनिस्ट पार्टी के द्वारा राष्ट्रीय आंदोलन में एक नए वामपंथी रूझान को प्रोत्साहन दिया गया।
- **कांग्रेस समाजवादी दल (CSP) :** 1933 में कांग्रेस के कुछ नेताओं ने नासिक जेल में एक कांग्रेस समाजवादी पार्टी गठित करने का निर्णय लिया। यह पार्टी कांग्रेस के अन्तर्गत ही कार्य करती। फिर 1934 में कांग्रेस समाजवादी पार्टी का गठन हुआ। इसके कुछ महत्वपूर्ण नेता आचार्य नरेन्द्र देव, जयप्रकाश नारायण, अन्नपूर्णा नंद सिंह, मीनू मसानी, अशोक मेहता आदि थे। जवाहरलाल नेहरू ने इस पार्टी को आशीर्वाद जरूर दिया, लेकिन वे इसके सदस्य नहीं बने।
- इस पार्टी का लक्ष्य था संगठन एवं विचारधारा के स्तर पर कांग्रेस को समाजवाद की ओर मोड़ना। विचारधारा के स्तर पर कांग्रेस को रूपांतरित करने का अर्थ था- कांग्रेस जनों को धीरे-धीरे इस बात के लिए राजी करना कि वे स्वतंत्र भारत की प्राप्ति के लिए समाजवादी दृष्टिकोण अपनाएं तथा वर्तमान आर्थिक मुद्दों पर अपना रूख किसानों और मजदूरों के पक्ष में रखें। संगठन के स्तर पर रूपांतरण का अर्थ था- ऊपर से नेतृत्व का परिवर्तन क्योंकि इस पार्टी के नेता मानते थे कि वर्तमान नेतृत्व जनता के संघर्ष को चरम तक ले जाने में अक्षम है।

कांग्रेस पर समाजवादी विचारधारा से प्रेरित युवा नेताओं का प्रभाव :-

- कांग्रेस पर जवाहरलाल नेहरू तथा सुभाष चन्द्र बोस जैसे युवा नेताओं का प्रभाव बढ़ता जा रहा था। इनके द्वारा विभिन्न अधिवेशनों की अध्यक्षता की गई और उनमें सर्वाधिक कार्यक्रम बनाये गये। जवाहरलाल नेहरू ने 1929 के लाहौर अधिवेशन, 1936 के लखनऊ अधिवेशन और 1937 के फैजपुर अधिवेशन की अध्यक्षता की। 1929 के लाहौर अधिवेशन में उन्होंने घोषित किया कि 'मैं समाजवादी हूँ'। फिर 1936 के लखनऊ अधिवेशन में उन्होंने यह स्पष्ट किया कि "मैं मानता हूँ कि भारत और विश्व की समस्या का एक मात्र हल समाजवाद है"।
- फिर 1938 तथा 1939 में सुभाष चंद्र बोस ने क्रमशः हरिपुरा तथा त्रिपुरी अधिवेशन की अध्यक्षता की। यद्यपि त्रिपुरी अधिवेशन ने संकट का रूप ले लिया क्योंकि इस अधिवेशन के मध्य कांग्रेस के वामपंथी तथा दक्षिणपंथी गुटों के बीच संघर्ष छिड़ गया। दक्षिणपंथी खेमे के विरोध के बावजूद भी सुभाष के द्वारा चुनाव जीतना, वामपंथी विचारों की प्रगति को दर्शाता है।

समाजवाद अथवा वामपंथ का योगदान :-

1. इसके प्रभाव से किसानों तथा मजदूरों की समस्या को प्रभावी ढंग से उभारा गया। इसने किसानों और श्रमिकों को संगठित किया तथा राजनीति में उनकी भागीदारी को प्रोत्साहन दिया।
2. इसने स्वतंत्रता की परिभाषा बदल दी तथा राजनीतिक स्वतंत्रता के साथ-साथ आर्थिक एवं सामाजिक स्वतंत्रता पर भी बल दिया।
3. इसने कांग्रेस के कार्यक्रम को भी समाजवाद की दिशा दे दी। उदाहरण के लिए, 1931 का कराची अधिवेशन (20 सूत्री समाजवादी कार्यक्रम)। कराची प्रस्ताव में श्रमिकों के लिए सामान्य कार्यक्रम; जैसे- अधिक पारिश्रमिक, बंधुआ मजदूरी की समाप्ति एवं ट्रेड यूनियन बनाने के अधिकार आदि को शामिल किया गया था।
4. 1936 के लखनऊ अधिवेशन एवं 1937 के फैजपुर अधिवेशन में किसानों की दशा में सुधार के लिए प्रगतिशील

कृषि कार्यक्रम लाए गए। 1938 के हरिपुरा अधिवेशन में 'योजना समिति' का गठन हुआ, इसका अध्यक्ष जवाहरलाल नेहरू को बनाया गया।

5. महिलाओं के अधिकारों की रक्षा तथा राजनीति में धर्मनिरपेक्षता की बात लाना कम्युनिस्टों की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण उपलब्धियों में से एक थी।

सीमाएँ :-

1. भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के नेताओं ने चीन के कम्युनिस्ट नेताओं की तरह व्यावहारिक दृष्टिकोण नहीं अपनाया अर्थात् उन्होंने भारतीय परिस्थितियों के अनुकूल रणनीति नहीं अपनायी, बल्कि हमेशा मॉस्को एवं लंदन से ही निर्देशित होते रहे।
2. कांग्रेस समाजवादी दल ने अपना पहला लक्ष्य राष्ट्रवाद को बनाया और फिर समाजवाद को।
3. संकट के समय भी विभिन्न समाजवादी संगठन संयुक्त मोर्चा बनाने में विफल रहे। उदाहरण के लिए, त्रिपुरी संकट। इस संकट के समय न केवल कांग्रेस समाजवादी दल एवं नेहरू ने सुभाष का साथ छोड़ दिया था, वरन् समाजवादी दल ने भी सुभाष को किनारे कर दिया था।
4. जब तक भारत में कम्युनिस्ट आंदोलन आरंभ हुआ, तब तक गांधीजी के नेतृत्व में एक सशक्त बुर्जुआ आंदोलन स्थापित हो चुका था। अत: भारत में कम्युनिस्टों के लिये गांधीवाद भी एक बड़ी चुनौती बना रहा।

महिलाओं में जागृति

- डॉ. सरोजिनी नायडू एवं श्रीमती एनी बेसेंट के प्रयास से महिला मताधिकार के मुद्दे को प्रोत्साहन मिला था।
- प्रांतीय विधान मण्डलों के चुनाव में महिलाओं को मताधिकार 1930 तक मिल चुका था। फिर 1935 में केन्द्रीय विधान मण्डल में महिलाओं को मताधिकार मिला तथा उनके लिए सीटें भी आरक्षित की गईं।

किसानों में जागृति

- 1920 के दशक में प्रांतीय किसान सभा की स्थापना की गई। फिर 1930 के दशक में सहजानंद सरस्वती के नेतृत्व में अखिल भारतीय किसान सभा का गठन हुआ।
- 1937-38 में बिहार के बरहिया ताल में कार्यानंद शर्मा के नेतृत्व में बकाश्त आंदोलन हुआ।

सम्प्रदायवाद की प्रगति

- **1930 के दशक में मुस्लिम जमींदारों को समाजवाद का भय :-** 1930 के दशक में मुस्लिम जमींदार वर्ग बढ़ते हुए समाजवाद के खतरे से भयभीत थे। उन्हें डर था कि कहीं समाज आर्थिक आधार पर न बँट जाये, इसलिए उन्होंने साम्प्रदायिक विभाजन को प्रोत्साहन दिया।
- **1937 में चुनावी परिणामों का सम्प्रदायवाद पर प्रभाव :-**

1. 1932 ई. के साम्प्रदायिक पंचाट में मुस्लिम लीग की लगभग सभी माँगें मान ली गईं। अब उनके पास कोई मुद्दा नहीं रह गया था। अत: 1937 के चुनाव में मुस्लिम लीग की हार हुई। इस हार के पश्चात् मुहम्मद अली जिन्ना ने सबक सीखा। फिर जिन्ना ने मुस्लिम लीग को जन सामान्य पार्टी बनाने के लिए नई नीति और नये कार्यक्रमों को अपनाया।
2. दूसरी तरफ, हिन्दू महासभा को भी चुनावी विफलता का सामना करना पड़ा। अत: हिन्दू महासभा के अध्यक्ष मदन मोहन मालवीय ने स्वास्थ्य के आधार पर त्याग पत्र दे दिया, फिर 1938 ई. में नये अध्यक्ष वी.डी. सावरकर बने। उसी तरह, डॉ. हेडगेवार की मृत्यु के बाद राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के नये अध्यक्ष गोलवलकर बने। इस प्रकार उग्र सम्प्रदायवाद का चरण अर्थात् जिन्ना, सावरकर और गोलवलकर का चरण प्रारंभ हुआ।

■■■